RESEARCH COMMUNICATIONS
(An International Open Access, Peer Reviewed, Multidisciplinary Online Journal)
https://research-communications.cmpcollege.ac.in
ISSN: 2584-1270
Volume: 2, Issue: 2, July-December 2024, pp. 7-11

पुराणों में व्याप्त काशी के शैव दर्शन का इतिहास एवं स्वरूप: एक अध्ययन

मधु यादव

शोध छात्रा, प्राचीन इतिहास विभाग

सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

सारांश

काशी परम्परा और इतिहास दोनो ही दृष्टियों से विश्व की प्राचीनतम् नगरियों में सर्वप्रमुख है, जिसकी तुलना एथेन्स, रोम जेरुसलम जैसे प्राचीन नगरों से की जाती है। विश्व के अधिकांश प्राचीन नगर और उनकी संस्कृतियाँ समय के प्रवाह के साथ नष्ट हो गयी, किन्तु काशी की धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा का प्रवाह वैदिक काल से लेकर आज तक उसी वेग से प्रवाहित है। शिव की निवास स्थली होने के कारण काशी शैव धर्मावलम्बियों के लिये विशेष महत्व की स्थली रही है। इसके साथ ही ब्राह्मण धर्म के अन्य सम्प्रदायो (वैष्णव , शाक्त, सौर और गाणपत्य) तथा श्रमण परम्परा के जैन एवं बौद्ध धर्म की गतिविधियों का केन्द्र रही है। धर्म, दर्शन, योग, ज्योतिष, विद्या, व्यापार, कला एवं संगीत काशी की संस्कृति का प्राण है।

मुख्य शब्द: *धर्म, शिव, आध्यात्मिक नगरी, पौराणिक काशी, तीर्थक्षेत्र*

प्रस्तावना

वाराणसी पूर्व दिशा की शाश्वत नगरी है, न केवल

भारत के लिये, किन्तु पूर्वी एशिया के लिये भी।।

— जवाहर लाल नेहरु

भारतवर्ष अति प्राचीन काल से धर्म प्रधान देश रहा है, भारतीय परम्परा के अनुसार मानव जीवन के सर्वांगीण विकास में सहायक समस्त साधनों का सामूहिक नाम धर्म था, जिसके अंतर्गत मानव जीवन के उन समस्त क्रियाकलापों का समावेश था, जो उसके लौकिक या पारलौकिक उत्थान में सहायक थे। प्रत्येक भारतीय की राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिचर्या उस क्षेत्र में उसके धर्म से नियंत्रित थे, जिसे शास्त्रकारों ने *"एषा: धर्म सनातनः"* की संज्ञा दी है। ईश्वर की उपासना भारतीय धर्म का एक अंग मात्र था । वस्तुतः भारतीय धर्म से तात्पर्य उन समस्त क्रियाकलापों से है जिसमे धर्म, अर्थ,काम तथा मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों की पूर्ति हो। भारत में पावित्र धार्मिक स्थलों को

मानवीय आस्था की अन्तरात्मक अनुभूति एवं दैवीय शक्ति के सम्मिलन का अद्भुत संगम माना जाता है। भारतीय सन्दर्भ में ऐसे कई तीर्थस्थल है जो विभिन संदर्भों या विभिन्न कालो में भिन्न-भिन स्तरीय महत्ता का प्रदर्शन करते है, जिनमे काशी का स्थान सर्वोपरि है। प्राचीनता की गरिमा से मण्डित काशी को भारत की धार्मिक सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक राजधानी होने का गौरव प्राप्त है। **पी०वी काणे** ने उचित ही कहा है, "विश्व में ऐसा कोई नगर नहीं है जो वाराणसी की तुलना में उससे ज्यादा प्राचीनता निरन्तरता एवं मोहक का पात्र हो।" वैदिक युग से लेकर आज तक वाराणसी की संस्कृति के तत्व अविच्छन्न रुप से प्रवाहित हो रहे है। गार्ग्य, जाबालि, काशिराज, दिवोदास, पार्श्वनाथ, महात्मा बुद्ध तथा इनके बाद भी वाराणसी भारतीय संस्कृति का केन्द्र बनी रही। इसकी संस्कृति खंडहरों में अवशेष के रूप में नहीं, अपितु जीवंत रूप में वहां की गली-गली, कंकड - कंकड़ में दृष्टिगोचर होती है। यहाँ संस्कृति मरती नही अपितु पलती है । इस क्षेत्र को इतिहास में खोजने की अपेक्षा यहाँ इतिहास को खोजा जाना चाहिये । वस्तुतः वाराणसी स्वयं इतिहास है।[1]

भारतीय हिन्दू धर्म एवं परम्परा में शिव का सर्वोपरि एवं विशिष्ट स्थान है। इनकी गणना त्रिदेवों में की जाती है, तथा इन्हे सृष्टि चक्र के अन्त एवं प्रारंभकर्ता के रूप में मान्यता प्राप्त है । पशुपति रूप में सिन्धु सभ्यता से लेकर पौराणिक काल तक शिव मिथको एवं कथाओं में व्याप्त है, साथ ही वर्तमान में देव प्रतीक चिन्हों में वे अग्रणी है। वैदिक काल में असीमित शक्ति स्रोत के रूप में शिव" रुद्र" थे। काल प्रवाह के क्रम में पौराणिक काल मे शिव लोककल्याणी देव के रूप में स्थापित हुये। पर्वत एवं वनों में साधनारत् शिव ने पर्वतराज पुत्री से विवाह कर अपने गृह चयन के लिये अत्यन्त ही मनोहारी एवं सौन्दर्यपूर्ण क्षेत्र को चुनकर उसे अपने त्रिशूल से सीमांकित कर **" आनन्दवन"**[2] कहा और अपने विशिष्ट स्वरूप में वे **अविमुक्तेश्वर** कहलाये ।

वाराणसी गंगा के बांयें तट पर अर्द्धचन्द्राकार रूप में **25°18' उत्तरी अक्षांश एवं 83° 1' पूर्वी देशान्तर** पर स्थित है।[3] पौराणिक अनुश्रुतियों के अनुसार "**वरुणा" और "असि** नाम की नदियों के मध्य बसने के कारण इस नगर का नाम वाराणसी पड़ा । कनिंघम भी इस मत की पुष्टि करते हैं।[4]

छठी शती ई० पू० के जैन एवं बौद्ध ग्रन्थों में षोडश महाजनपदो का उल्लेख है ,जिनमें काशी का भी एक प्रमुख जनपद के रूप में उल्लेख हुआ है जिसकी राजधानी वाराणसी थी। काशी जनपद के उत्तर में कोशल, पूर्व में मगध और पश्चिम वत्स था।[5]काशी की दक्षिणी सीमा विंध्य पर्वत श्रृंखला से घिरी हुई थी।[6]पुराणों में काशी या वाराणसी का समान अर्थों में उल्लेख हुआ है ,जो असि एवं वरुणा नदियों के मध्य स्थित था । **पदम् पुराण** के अनुसार[7]-

वरुणायास्तथा चास्या मध्ये वाराणसीपुरी

तत्रैव संस्थितं तत्वं नित्यमेव विमुक्तकम् ।।

प्राचीन ग्रन्थों में काशी के अन्य नाम सुरंधन, पुष्पवन्ती, रम्यनगरी, पुप्पवती अविमुक्तक्षेत्र, आनन्दकानन,महाश्मशान तथा ब्रह्मवर्द्धन मिलते है। **मत्स्य पुराण** के अनुसार काशी का वर्णन करते हुए भगवान शिव स्वयं कहते है -

वाराणस्या नदी पुण्या सिद्धगन्धर्व सेविता

प्रविष्टा त्रिपथा गंगा तस्मिन क्षेत्रे मम् प्रिये ।

अर्थात सिद्ध गन्धर्वे से सेवित पुण्य नदी वाराणसी जहाँ गंगा से मिलती है, हे प्रिये। वह क्षेत्र मुझे प्रिय है[18] वैदिक साहित्य में काशी के इतिहास की सामग्री बहुत परिमित है, किन्तु पुराणों में ऐसा नहीं है। पुराणों के द्वारा काशी के धार्मिक विश्वासों पर विशेषतः शिव पूजा के इतिहास पर काफी प्रकाश पड़ता है। किन्तु इन विवरणों का प्रयोग बहुत सावधानी से करने की आवश्यकता होती है क्योंकि इनकी रचना या संकलन का काल पूर्णतया निर्धारित नहीं है। एफ०ई० पार्जिटर ने काशी के इतिहास की व्याख्या पौराणिक आधार पर की है[9], उनके निष्कर्षों की पुष्टि पुरातात्विक खोजो द्वारा ही संभव है। वाराणसी के सारनाथ क्षेत्र में अधिक उत्खनन कार्य हुये है, काशी को केन्द्र में रखकर ज्यादा पुरातात्विक खोजे नहीं हुई है। वैदिक साहित्य की अपेक्षा पुराणों से काशी के इतिहास और प्राचीनता का बोध होता है जिनमें मुख्यतः काशीखंड,काशीरहस्य ,ब्रह्म पुराण ,मत्स्य पुराण,अग्नि पुराण, शिव महापुराण इत्यादि प्रमुख हैं। मत्स्य पुराण (180/68) में काशी के प्रतापी राजा अलर्क का उल्लेख करते हुये काशी को "अलर्कपुरी" भी कह दिया गया है। वायु पुराण (92/23-24) और ब्रह्माण्ड पुराण (3/63, 119-141) में काशी के राजा दिवोदास और हैहय राजा भद्रश्रेण्य के मध्य हुये युद्धों की जानकारी प्राप्त होती है।

हिन्दू धर्म के तीर्थ स्थलों में चार धामों एवं सप्तपुरियों का सर्वाधिक महत्व है काशी की गणना सप्तपुरियो में की गई है । तीर्थ के रूप में काशी का नाम सर्वप्रथम महाभारत में मिलता है। काशी के लोकोत्तर स्वरुप का वर्णन स्कन्दपुराण के काशी खण्ड में मिलता है महर्षि व्यास ने काशीखण्ड के प्रारम्भ में ही इसकी अलौकिकता का उल्लेख किया है।[10] काशीखण्ड मूलतः स्कन्दपुराण के सप्तखण्डों में से एक है, जिसमे 100 अध्याय एवं 11,624 श्लोक है। काशी खण्ड की विषय वस्तु में द्वादश ज्योतिर्लिंगों , शिव द्वारा ब्रम्हा का शिरच्छेदन, शिव का कापालिक भैरव रूप में भ्रमण दक्ष का महायज्ञ, दिवोदास की कथा इत्यादि उल्लेख मिलता है। **काशीखण्ड (अध्याय 94) में वाराणसी के 511 शिवालयों का उल्लेख मिलता है, जिनमें 11 स्वयंभूलिंग, 46 देवताओं द्वारा स्थापित शिवलिंग, 41 ऋषियों द्वारा प्रतिष्ठित लिगं,7 ग्रन्थों द्वारा पूजित लिंग, 40 गणों द्वारा अर्चित, तथा 295 अन्य शिवलिंग** सम्मिलित है। शिव पुराण के कोटिरूद्र संहिता में 22वें 23वें अध्याय में काशी विश्वेश्वर ज्योर्तिलिंग वर्णन मिलता है। मत्स्य पुराण में यक्ष हरिकेश की कहानी से काशी की यक्ष पूजा पर प्रकाश पड़ता है जिसने बाराणसी आकर एक हजार वर्ष तक शिव आराधना की। [1] [1] इस कथा से हमें कई बातो की जानकारी मिलती है जैसे कि जिस समय बनारस में यक्ष पूजा प्रचलित थी , उस समय में वहाँ शिव पूजा भी होती रही। शैव धर्म ने यक्षधर्म को अपने में मिला लिया और जितने यक्ष थे वे शिव के पार्षद हो गये। संभवत: गुप्तकाल में शैव धर्म की यक्ष पर धर्म पूर्णतः विजय हुई। गुप्त काल में शैव धर्म का काशी में पुनरूत्थान होते ही अनेक शिवलिंगों की स्थापना होने लगी थी। मत्स्यपुराण (121/28-29) के अनुसार गुप्त युग में काशी के निम्न आठ शिवलिंग थे- **हरिश्चंद्रेश्वर ,अमातकेश्वर ,जालेश्वर ,श्री पर्वतेश्वर महालयेश्वर, कृमिचंडेश्वर, केदारेश्वर और अविमुक्तेश्वर। इनमें सबसे प्रधान अविमुक्तेश्वर थे।** काशीखण्ड के अध्याय 10 में भी इनमे से अधिकतर नाम मिलते है परन्तु इस युग में अविमुक्तेश्वर की इतनी महिमा नही रह गयी और इसकी जगह विश्वेश्वर ने ले ली थी।[12]गुप्त काल में राजघाट की खुदाई से भी वाराणसी में शैवधर्म के सम्बन्ध में प्रमाण मिलते है।[13] पुराणों के अनुसार गुप्तकाल में बनारस की पवित्रता का विश्वास दृढ़ हो चुका था। अग्निपुराण में यहाँ स्नान ,जप, होम, मरण, श्राद्ध, दान और निवास मुक्तिदायक माने गये है। देवदेव, अविमुक्त का शिवालय, महाश्मशान, तीर्थ और तपोवन पवित्रता की वस्तु माने गये।[14] ब्रह्मचारी, सिद्ध, वेदांतकोविद इत्यादि मरने के दिन तक वहीं वास करने लगे थे।[15]**मत्स्यपुराण** के अनुसार-

देवो देवी नदी गंगा मिष्टमन्नं शुभागतिः,

वाराणस्यां विशालाक्षि वासः कस्य च रोचते ।।

अर्थात हे! विशालाक्षि जहाँ देव है, देवी है, गंगा नदी है, मिठाइयां है और शुभगति है। ऐसी वाराणसी किसको न रुचेगी।[16]

ह्वेन त्सांग की यात्रा विवरण से ज्ञात होता है कि काशी में देवमंदिर सौ के ऊपर थे, और इनके धर्मों के अनुयायियों की संख्या 10 हजार के ऊपर थी, जिनमें अधिकतर शैव थे। उनमें से कुछ बाल कटवा डालते थे, कुछ जटाजूट बांधते थे ,कुछ नंगे फिरते थे ,तो कुछ भस्म रमाते थे। घोर तपस्या में विलीन होकर ये भव- बाधा से मुक्ति पाने के लिये सतत प्रयत्नशील रहते थे। यात्रा विवरण के अनुसार खास बनारस में बीस देव मन्दिर थे जिनमें एक मन्दिर में देव की कांसे की बनी 100 फुट ऊंची मूर्ति थी जो सजीवता और भयोत्पादक कान्ति से लोगों को प्रभावित करती थी। यात्रा विवरण के मूल को इकट्ठा करने वाले फैंग- ची का कहना है कि इस देव मन्दिर में 100 फुट ऊंचे शिवलिंग की पूजा होती थी।[17]

आठवी से ग्यारहवी सदी के कुछ प्रमुख अभिलेखों द्वारा भी काशी में शैव धर्म के स्वरूप की जानकारी प्राप्त होती है। जबलपुर के एक ताम्रपट्ट से, जिसका समय 1065 ई. है, के अनुसार काशी में कलचुरि शासक ने कर्णमेरू नामक एक मंदिर बनवाया था।[18] इसके अतिरिक्त बनारस से मिले पंथ का आठवीं सदी का लेख[19], महिपाल के समय का 1027 ई० का लेख[20] तथा कर्ण के 1056 ई० [21]और 1065 ई ०[22]के लेखो से भी काशी के धार्मिक जीवन पर प्रकाश पड़ता है । पंथ के लेख के अनुसार वाराणसी ने त्रिभुवन को अपने में समेट रखा था। दूर दूर से आये विरक्त जन्म-मरण से मोक्ष पाने के लिये यहाँ तप करते थे। अभिलेख की दूसरी पंक्ति में अपने गणों सहित देव की विमुक्त क्षेत्र वाराणसी की पौराणिक कथा का उल्लेख है। जिसे शिव ने कभी न छोड़ने की प्रतिज्ञा की थी। वस्तुतः काशी की इस इस युग में इतनी महत्ता थी कि ब्रह्महत्या का भी पातकी कलिकलुष से च्युत हो जाता था।[23]बनारस की आठवीं सदी में इतनी महत्ता थी कि शंकराचार्य को भी बनारस जाकर अपने मत की विद्वानों द्वारा पुष्टि करानी पड़ी।[24] और संभवत: उन्होंने ब्रम्हसूत्र (7/1) की रचना बनारस में गंगा किनारे की। गोविंद्रचंद्र के लेख से गहड़वाल युग के शैव और वैष्णव मंदिरों का पता चलता है ।[24] जिनमें **अघोरेश्वर, पंचोकार, लौडेश्वर, इन्द्रमाधव** आदि थे इनसे पहले तीन शैव मन्दिर और चौथा विष्णु का है ।[25] जयचन्द्र के एक लेख से **कृतिवासेश्वर के मन्दिर** का भी पता चलता है [26] । गहड़वाल सम्राट वैष्णव होते हुये भी उनके अनेंक दानपत्र शैव मन्दिरो जैसे- **देवेश्वर, त्रिलोचनेश्वर, अघोरेश्वर, कृतिवासेश्वर, इन्द्रेश्वर, ओंकारेश्वर से** सम्बधित थे।

निष्कर्ष

वस्तुत: काशी में शिव विविध रूपों में पूजित है और विविध नामों द्वारा उनका स्मरण किया जाता रहा है ।रूद्र रूप में वे भयंकर और महासंहारक है, तो वहीं पशुपति रुप में जगत के स्वामी है और पाश में जकडे है उनका उद्वार करते है ,वे योगीश्वर है ,महायोगी के रूप में वे स्वयं चैतन्यता है और सम्पूर्ण सृष्टि की अन्तरात्मा है वह आखेटक भी है जो स्वयं को कई आकारों तथा क्रियाओं में व्यक्त करते हैं, वे महाकाल है, काल समय है, मृत्यू है ,श्यामवर्णी है ,वह तमस के समतुल्य है ,जो सृष्टि का रक्षण और भक्षण करने की शक्ति रखते हैं।

इस प्रकार काशी का महत्व एवं काशी में शिव का महत्त्व वर्णनातीत है। वर्तमान में काशी में एक हजार से अधिक शैव मंदिर है। जिनमें से अधिकांश पौराणिक दृष्टि से अपना महत्व रखते है । वास्तव में यहाँ स्थित शिव मंदिरों की संख्या अगणित है जिसे सूचीबद्ध करना अत्यन्त कठिन है, यहाँ के मंदिरो की अगणित संख्या देखकर हमारे मन में काशी की "हर कंकर में शंकर"की उक्ति चरितार्थ होती है। श्रावण मास में यहाँ कावरियों का रेला जुटा रहता है, और देश के भिन्न- भिन्न भागों से आए कांवरिये बोल बम कहते हुए शिव मन्दिरों में बाबा का अभिषेक करते हैं।

सन्दर्भ

1. काणे, पी० वी० धर्मशास्त्र का इतिहास, चतुर्थ खण्ड, हिन्दी समिति ग्रन्थमाला, लखनऊ 1975 पृ०-1339
2. काशीखण्ड 74/114-115
3. मोतीचन्द्र - काशी का इतिहास, हिंदी ग्रंथरत्नाकर प्राइवेट लिमिटेड, हीराबाग, बम्बई, 1962 पृ o-1
4. ऐशंट ज्योग्राफी, पृ० - 499/मोतीचन्द्र - काशी का इतिहास, पृ०-2
5. केंब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया भाग-1, पृ ०-14
6. मोतीचद्र - काशी का इतिहास, पृ ०-7
7. पद्मपुराण - 33/50
8. मत्स्य पुराण 183/6-7 / मोतीचन्द्र -काशी का इतिहास, पृ ०-3
9. पार्जिटर, इन्डियन हिस्टोरिकल ट्रेडिशन, 5/10/9, लण्डन 1922 / मोतीचंद्र-काशी का इतिहास-पृ 22-23
10. काशी खण्ड- 1/2
11. मत्स्य पुराण - 180/6-20
12. मोतीचन्द्र - काशी का इतिहास पृ -95
13. वही पृ०-95-96
14. मत्स्य पुराण -184/9
15. मत्स्य पुराण- 182/8
16. वही - 184/51
17. मोतीचन्द्र - काशी का इतिहास पृ०-103/ ह्वेनसांग की भारत यात्रा (ठाकुर प्रसाद शर्मा) आदर्श हिन्दी पुस्तकालय, इलाहाबाद 1972 पृ -112
18. एपिग्राफिया इण्डिका 2/1
19. एपिग्राफिया इण्डिका 9/59
20. अर्कियोलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट -1903-04, पृ०223-24
21. अर्कियोलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट -1906-07, पृ ०170-171
22. एपिग्राफिया इण्डिका 2/1
23. मोतीचंद्र - काशी का इतिहास ,पृ० 109
24. अर्कियोलॉजिकल सर्व रिपोर्ट 1903-04, पृ ० 221
25. एपिग्राफिया इंडिका 8/152-53
26. एपिग्राफिया इंडिका 4/124-26